कठोपनिषद्

उपनिषद् का अर्थ

जिस विद्या के द्वारा ब्रह्म का सामीप्य एवं तादात्म्य प्राप्त किया जाता है वह 'उपनिषद्' है।

यह उपनिषद् कृष्णयजुर्वेद की कठशाखा के अन्तर्गत आती है।

इस उपनिषद् में यमराज और नचिकेता के मध्य संवाद द्वारा ब्रह्म ज्ञान का वर्णन किया गया है।

वाजश्रवसः द्वारा विश्वजित् यज्ञ का आयोजन तथा सर्वस्व दान किया गया। उन्होने बूढ़ी गायों का दान भी किया।

उनके पुत्र नचिकेता द्वारा यह विचार किया गया कि ऐसी गायों को दान देने से मेरे पिता सुखहीन लोक को जायेंगे

उसने पिता से कहा मुझे किसको देंगे

पिता ने कहा मै तुझे मृत्यु को दूँगा। जिस पर वह यमराज के घर चला गया।

यमराज के बाहर होने के कारण नचिकेता घर के बाहर ही तीन रात्रि रुका

यमराज ने तीन वर मांगने को कहा

पहला वर – मेरे पिता शान्त, प्रसन्नचित्त, क्रोधरहित हो जायें

दूसरा वर – स्वर्ग लोक को प्राप्त कराने वाली अग्नि का वर्णन करें

तीसरा वर –

सस्यमिव मर्त्यः पच्यते सस्यमिवाजायते पुनः।
येयं प्रेते विचिकित्सा मनुष्ये–
ऽस्तीत्येके नायमस्तीति चैके।
एतद्विद्यामनुशिष्टस्त्वयाहं
वराणामेष वरस्तृतीयः।।

मनुष्य अन्न की तरह उत्पन्न होता है, पकता है और मर जाता है और पुनः अन्न की तरह उत्पन्न हो जाता है। मरे हुए मनुष्य के विषय में जो यह सन्देह है कि कोई तो कहते है 'रहता है' और कोई कहते हैं 'नहीं रहता' आपसे शिक्षित हुआ मै इसे जान सकूँ। मेरे वरों में यह तीसरा वर है।

यमराज का कथन –

देवैरत्रापि विचिकित्सितं पुरा
न हि सुज्ञेयमणुरेष धर्मः।
अन्यं वरं नचिकेतो वृणीष्व
मा मोपरोत्सीरति मा सृजैनम्।।

पूर्वकाल में इस विषय में देवताओं को भी सन्देह हुआ था, क्योंकि यह सूक्ष्म धर्म सुगमता से जानने योग्य नहीं है। हे नचिकेता, तू दूसरा वर माँग ले। तू यह वर मेरे लिये छोड़ दे।

नचिकेता ने कहा –

देवैरत्रापि विचिकित्सितं किल
त्वं च मृत्यो यन्न सुज्ञेयमात्थ।

वक्ता चास्य त्वादृगन्यो न लभ्यो
नान्यो वरस्तुल्य एतस्य कश्चित्।।

हे यमराज जिस विषय में देवताओं को भी सन्देह हुआ तथा जिसे आप भी सुगमता से जानने योग्य नही बतला रहे हैं, तथा जिसको बताने वाला भी आपके समान अन्य कोई नही मिल सकता मुझे वही जानना है। इसके समान और कोई वर नही है।

यमराज द्वारा प्रलोभन –

शतायुषः पुत्रपौत्रान्वृणीष्व
बहून्पशून्हस्तिहिरण्यमश्वान्।
भूमेर्महदायतनं वृणीष्व
स्वयं च जीव शरदो यावदिच्छसि।।

हे नचिकेता ! तू सौ वर्ष की आयु वाले बेटे – पोते मांग ले, बहुत से पशु, हाथी, हिरण, घोडे मांग ले, विशाल भू मण्डल मांग ले तथा स्वयं जितने वर्ष इच्छा हो जीवित रहना मांग ले।

एतत्तुल्यं यदि मन्यसे वरं
वृणीष्व वित्तं चिरजीविकां च।
महाभूमौ नचिकेतस्त्वमेधि
कामानां त्वा कामभाजं करोमि।।

इसी के समान यदि कोई और वर समझताा है तो उसे मांग ले अथवा धन – सम्पदा और अनन्तकाल के लिए उपयोगी सुख–साधन मांग ले। हे नचिकेता ! मै तुझे कामनाओं को इच्छानुसार भोगने वाला किए देता हूँ।

ये ये कामा दुर्लभा मर्त्यलोके
सर्वान्कामा श्छन्दतः प्रार्थयस्व।
इमा रामाः सरथाः सतूर्या
न हीदृशा लभ्यनीया मनुष्यैः।
आभिर्मत्प्रत्ताभिः परिचारयस्व
नचिकेतो मरणं मानुप्राक्षीः।।

मनुष्यलोक में जो–जो भोग दुर्लभ हैं उन सभी को तू एक के बाद एक मांग ले। यहाँ रथ और वाद्य सहित रमणियाँ हैं जो मनुष्यों को प्राप्त नहीं होती हैं। मेरे द्वारा दी गई इन कामिनियों से तू अपनी सेवा करा। परन्तु हे नचिकेता तू मरण सम्बधी प्रश्न मत पूछ।

नचिकेता ने कहा –

श्वोभावा मर्त्यस्य यदन्तकैत–
त्सर्वेन्द्रियाणां जरयन्ति तेजः।
अपि सर्वं जीवितमल्पमेव
तवैव वाहास्तव नृत्यगीते।।

हे यमराज ! यह सब भोग "कल रहेंगें या नही" इस प्रकार के हैं और यह सम्पूर्ण इन्द्रियों के तेज को समाप्त कर देते हैं। यह सारा जीवन भी बहुत थोडा ही है। आपके वाहन और नाच–गान आपके ही पास रहें – मुझे इनकी आवश्यकता नही है।

न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यो
लप्स्यामहे वित्तमद्राक्ष्म चेत्त्वा।
जीविष्यामो यावदीशिष्यसि त्वं
वरस्तु मे वरणीयः स एव।।

मनुष्य को धन से तृप्त नही किया जा सकता। जब आपको देख लिया है तो धन तो मुझे मिल ही जायेगा। जब तक आप शासन करेंगें मै जीवित रहूँगा। परन्तु मेरा प्रार्थनीय वर तो वही है।

यमराज द्वारा ब्रह्म ज्ञान का उपदेश –

अन्यच्छेयोऽन्यदुतैव प्रेय–
स्ते उभे नानार्थे पुरुष ँसिनीतः।
तयोः श्रेय आददानस्य साधु–
र्भवति हीयतेऽर्थाद्य उ प्रयो वृणीते।।

श्रेय (कल्याण) तथा प्रेय (सांसारिक भोग) दो अलग–अलग मार्ग हैं। दोनो मनुष्य को अपनी–अपनी ओर आकर्षित करते हैं। श्रेय को चुनने वाला श्रेष्ठ फल प्राप्त करता है और प्रेय को चुनने वाला पतन को प्राप्त होता है।

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेत–
स्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते
प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद्वृणीते।।

श्रेय और प्रेय दोनो मनुष्य के समक्ष आते हैं। बुद्धिमान मनुष्य उन पर विचार कर उन्हे जान लेता है। विवेकी पुरुष श्रेय का वरण करता है। अविवेकी पुरुष प्रेय पथ को स्वीकार करता है।

स त्वं प्रियान्प्रियरुपाँश्च कामा–
नभिध्यायन्नचिकेतोऽत्यस्राक्षीः।
नैताँसृङ्कां वित्तमयीमवाप्तो
यस्यां मज्जन्ति बहवो मनुष्याः।।

हे नचिकेता! भोग विलास के नश्वर साधनों को उनका असारत्व चिंतन करके तुमने त्याग दिया है और धन रुपी नदी में जिसमें बहुत से मनुष्य डूब जाते हैं तुम उसमे नही गिरे।

अविद्या ग्रस्त की स्थिति

अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः
स्वयं धीराः पण्डितंमन्यमानाः।
दन्द्रम्यमाणाः परियन्ति मूढा
अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः।।

प्रेय को चुनने वाले मूढ़ व्यक्ति अविद्या मे रहते हुए भी स्वयं को धीर और पण्डित मानते हुए उसी प्रकार भटकते रहते हैं जैसे अन्धों के द्वारा ले जाए जाने वाले अन्धे।

आत्म ज्ञान का फल

तं दुर्दर्शं गूढमनुप्रविष्टं
गुहाहितं गव्हरेष्ठं पुराणम्।
अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं
मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति।।

उस कठिनता से दिखाई पड़ने वाले, गूढ़ स्थान में अनुप्रविष्ठ बुद्धिरुपी गुफा में स्थित, गहन स्थान में रहने वाले, पुरातन देव को अध्यात्म योग के द्वारा जानकर धीर पुरुष हर्ष – शोक को त्याग देता है।

ओंकार का उपदेश

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति
तपाँ्सि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदँ्संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्।।

सारे वेद जिस पद का वर्णन करते हैं और सारे तप जिसकी प्राप्ति के साधन हैं, जिसे प्राप्त करने की इच्छा से साधक ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं उस पद को मै तुमसे संक्षेप में कहता हूँ। ॐ ही वह पद है।

एतद्धयेवाक्षरं ब्रह्म एतद्धयेाक्षरं परम्।
एतद्धयेवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत्।।

यह अक्षर ही ब्रह्म है, यह अक्षर ही परम है, इस अक्षर को ही जानकर जो जिसकी इच्छा करता है वही उसे मिल जाता है।

एतदालम्बनँ श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम्।
एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते।।

इसी का आलम्बन (सहारा) श्रेष्ठ है, इसी का आलम्बन परम है, इसी के आलम्बन को जानकर व्यक्ति ब्रह्म लोक को प्राप्त करता है।

आत्मा का स्वरुप

न जायते म्रियते वा विपश्चि–
न्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणों
न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

यह नित्य ज्ञान स्वरुप आत्मा ना तो उत्पन्न होता है और ना मरता है। वह ना तो किसी अन्य से उत्पन्न हुआ है और ना स्वयं से बना है। यह अजन्मा नित्य, शाश्वत (क्षय रहित) पुरातन है। यह शरीर के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता।

हन्ता चेन्मन्यते हन्तुँ हतश्चेन्मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो नायँ हन्ति न हन्यते।।

यदि मारने वाला यह विचार करता है कि उसने मार दिया और मारा जाने वाला यह समझता है कि वह मारा गया तो दोनो ही उसे नहीं जानते क्योंकि यह आत्मा ना तो मारता है और ना मारा जाता है।

अणोरणीयान्महतो महीया–
नात्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम्।
तमक्रतुः पश्यति वीतशोको
धातुप्रसादान्महिमानमात्मनः।।

यह अणु से भी अणु और महान से भी महान आत्मा जीव की हृदय रुपी गुहा में स्थित है। निष्काम पुरुष अपनी इन्द्रियों से अलग हटकर आत्मा को देखता है और शोक रहित हो जाता है।

अशरीरँ शरीरेष्वनवस्थेष्ववस्थितम्।
महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति।।

जो शरीर वालों में शरीर रहित है तथा अनित्यो में नित्य स्वरुप है ऐसी महान और सर्वव्यापक आत्मा को जानकर बुद्धिमान मनुष्य शोक नहीं करता।

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्य–
स्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूँ्स्वाम्।।

यह आत्मा तत्व केवल धर्मोपदेश सुनकर अथवा शास्त्रों का अध्ययन करके अथवा धारणा शक्ति से जाना नहीं जा सकता है। जिसको यह वरण करता है उसी के द्वारा जाना जा सकता है। उसके प्रति यह आत्मा अपने स्वरुप को अभिव्यक्त कर देता है।

रथ रुपक

आत्मानँ्रथिनं विद्धि शरीरँ्रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।

तू आत्मा को रथी जान, शरीर को रथ समझ, बुद्धि को सारथी जान और मन को लगाम समझ।

इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयाँ् स्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः।।

मनीषियों के कहे अनुसार तू इन्द्रियों को घोडे समझ और रुप, रस, गन्ध आदि विषयों को उनके मार्ग समझ और शरीर, इन्द्रियों और मन से युक्त आत्मा को सुख–दुख का अनुभव करने वाला भोक्ता समझ।

यस्त्वविज्ञानवान्भवत्ययुक्तेन मनसा सदा।
तस्येन्द्रियाण्यवश्यानि दुष्टाश्वा इव सारथेः।।

जो व्यक्ति सदा विवेकहीन तथा अनियन्त्रित चित्त वाला होता है उसकी इन्द्रियाँ उसी प्रकार उसके आधीन नहीं रहती जैसे अकुशल सारथी के आधीन दुष्ट घोडे नहीं रहते।

यस्तु विज्ञानवान्भवति युक्तेन मनसा सदा।
तस्येन्द्रियाणि वश्यानि सदश्वा इव सारथेः।।

परन्तु जो व्यक्ति विवेकशील और कुशल चित्त का होता है उसकी इन्द्रियाँ उसके आधीन उसी प्रकार रहती हैं जैसे कुशल सारथी के नियन्त्रण में अच्छे घोडे रहते हैं।

विज्ञानसारथिर्यस्तु मनःप्रग्रहवान्नरः।
सोऽध्वनः पारमाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदम्।।

जो मनुष्य विवेकयुक्त बुद्धिरुपी सारथी वाला और मन को वश में रखने वाला होता है वह संसार सागर से पार होकर उस विष्णु के परम पद को प्राप्त कर लेता है।

उद्‌बोधन

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया
दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।।

हे (अविद्याग्रस्त लोगों !) उठो, (अज्ञान – निद्रा से) जागो, और श्रेष्ठ पुरुषों के समीप जा कर ज्ञान प्राप्त करो। जिस प्रकार छुरे की धार तीक्ष्ण और दुरुह होती है, तत्वज्ञानी लोग उस मार्ग को वैसा ही दुर्गम बताते हैं।

अशब्दमस्पर्शमरुपमव्ययं
तथारसं नित्यमगन्धवच्च यत्।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं
निचाय्य तन्मृत्युमुखात्प्रमुच्यते।।

जो अशब्द, अस्पर्श, अरुप, अव्यय (अक्षय), रसहीन, नित्य और गन्धरहित है ; जो अनादि, अनन्त, महतत्व (बुद्धि) से भी ऊपर और ध्रुव (अटल) है, उस आत्म तत्व को जानकर व्यक्ति मृत्यु के मुख से छूट जाता है।

परान्चि खानि व्यतृणत्स्वयंभू–
स्तस्मात्पराङ्पश्यति नान्तरात्मन्।
कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्ष–
दावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्।।

परमात्मा ने समस्त इन्द्रियों को बहिर्मुख किया है। इसलिए मनुष्य वाह्य विषयों को ही देखता है, अन्तरात्मा को नहीं देखता। अमरत्व की आकांक्षा से जिसने अपनी चक्षु आदि इन्द्रियों पर संयम कर लिया है, ऐसा कोई धीर पुरुष ही अन्तरात्मा को देख सकता है।

हृदय स्थित ब्रह्म

अंगुष्ठामात्रः पुरुषो मध्य आत्मनि तिष्ठति।
ईशानो भूतभव्यस्य न ततो विजुगुप्सते। एतद्वै तत्।।

जो परम पुरुष अंगुष्ठ परिमाण में शरीर के मध्य में स्थित है वह भूत, भविष्य और वर्तमान का शासक है। उसे इस प्रकार जान लेने के बाद प्राणी ना तो किसी की निन्दा करता है और ना ही किसी से घृणा करता है। यही वह ब्रह्म है।

आत्मा का सर्वव्यापी रुप

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो
रुपं रुपं प्रतिरुपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा
रुपं रुपं प्रतिरुपो बहिश्च।।

जिस प्रकार एक ही अग्नि सम्पूर्ण भुवन (ब्रह्माण्ड) में प्रवेश करके जो जैसा है उसी के अनुरुप हो जाता है उसी प्रकार समस्त प्राणियों में स्थित ब्रह्म एक होते हुए भी भिन्न–भिन्न रुपों के अनुरुप होता है, और उनके बाहर भी है।

वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो
रुपं रुपं प्रतिरुपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा
रुपं रुपं प्रतिरुपो बहिश्च।।

जिस प्रकार ब्रह्माण्ड में प्रविष्ट हुआ वायु एक होता हुआ भी जो जैसा है उसी के अनुरुप हो जाता है उसी प्रकार समस्त प्राणियों मे विद्यमान ब्रह्म एक होने पर भी भिन्न–भिन्न रुपों के अनुरुप होता है, और उनके बाहर भी है।

सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षु–
र्न लिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा
न लिप्यते लोकदुःखेन बाह्यः।।

जिस प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड का नेत्र होकर भी सूर्य नेत्र संबधी बाहरी दोषों से लिप्त नही होता, उसी प्रकार सम्पूर्ण भूतों का एक ही आत्मा संसार के दुख–क्लेश आदि से लिप्त नही होता, बल्कि उनसे बाहर ही रहता है।

शान्ति का मार्ग

नित्योऽनित्यानां चेतनश्चेतनाना–
मेको बहूनां यो विदधाति कामान्।
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरा–

स्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम्।।

जो अनित्य पदार्थो में नित्य स्वरुप है और चेतनों में चेतन है और जो अकेला ही अनेकों की कामनाएं पूर्ण करता है उस आत्मा को जो विवेकी पुरुष देखते हैं उन्ही को शाश्वत शान्ति प्राप्त होती है, औरों को नहीं।

परम गति

यदा पंचावतिष्ठनते ज्ञानानि मनसा सह।
बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम्।।

जिस समय पाँचो ज्ञानेन्द्रियाँ मन सहित आत्मा तत्व में स्थित हो जाती हैं और बुद्धि भी चेष्ठा रहित हो जाती है तब इस स्थिति को परम गति कहते हैं।

नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा।
अस्तीतो ब्रुवतोऽन्यत्र कथं तदुपलभ्यते।।

यह आत्मा न तो मन से, न वाणी से, न नेत्र से और न अन्य इन्द्रियों से प्राप्त किया जा सकता है। "वह है" ऐसा कहने वालों से भिन्न व्यक्तियों को उपलब्ध नही हो सकता।

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिताः।
अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते।।

जिस समय व्यक्ति के हृदय में रहने वाली सारी कामनायें छूट जाती हैं उस समय वह व्यक्ति अमर हो जाता है और इस शरीर से ही ब्रह्म भाव को प्राप्त हो जाता है।

शतं चैका च हृदयस्य नाड्यस्तासां मुर्धानमभिनिःसृतैका।
तयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति विष्वङ्ङन्या उत्क्रमणे भवन्ति।।

हृदय में 101 नाडियां है इनमें एक मूर्धा (कपाल) का भेदन करके निकलती है। उसके द्वारा उर्ध्वगमन करने वाला व्यक्ति अमृतत्व को प्राप्त करता है। शेष नाड़ियों से निकला प्राण कामनाओं के अनुरुप विभिन्न योनियों में जाता है।

मृत्युप्रोक्तां नचिकेंतोऽथ लब्ध्वा
विद्यामेतां योगविधि्रं च कृत्स्नम्।
ब्रह्मप्राप्तो विरजोऽभूद्विमृत्यु–
रन्योऽप्येवं यो विदध्यात्ममेव।।

यमराज द्वारा बतायी गई इस ब्रह्म विद्या व योग विधि को पाकर नचिकेता समस्त विकारों से रहित तथा सर्वथा शुद्ध होकर जन्म–मृत्यु के बंधन से मुक्त हो गया और ब्रह्म भाव को प्राप्त हो गया। अन्य कोई भी जो इस अध्यात्म तत्व को इस प्रकार समझेगा वह भी ऐसी ही स्थिति प्राप्त कर सकेगा अर्थात वह भी जन्म–मृत्यु के बंधन से मुक्त होकर ब्रह्म रुप हो सकेगा।